RESEARCH DIRECTION
UGC Sr. No. 45489
ISSN NO – 2321-5488
Vol.: 6/ Issue: 1, July 2018

21 वीं सदी का वृद्ध जीवन : त्रासदी एवं छटपटाहट

सहा. प्रा. संजीवनी संदीप पाटील,
कला, वाणिज्य और विज्ञान महाविद्यालय, गडहिंग्लज, जि. कोल्हापूर.

सारांश :

''जिंदगी एक कहानी समझ लीजिए,
इसे दर्द की रानी समझ लीजिए,
शरीर पर खींचे यह अक्षांश–रेखांश,
इसे उम्र की छेड़खानी समझ लीजिए।''

उम्र की तीसरी सीढ़ी पर पाँव रखते ही मनुष्य बूढ़ों की जमात में शामिल हो जाता है। बचपन और जवानी की मौज–मस्ती के दिन याद कर बिसूरता है। सोचने व काम करने की शक्ति में शिथिलता आने से वह अपने आप को मजबूर और कमजोर समझने लगता है। जादातर आज बनावटी खान–पान, बीमारीयाँ, दवाइयाँ, तनाव के चलते समय से पहले अधेड़ उम्र में ही बुजुर्गीयत के सारे लक्षण मनुष्य में दिख रहे हैं। यहीं कारण है कि मनुष्य शरीर से बाद में लेकिन मन से पहले वृद्ध बनता जा रहा है। जिस परिवार को सँवारने के लिए उसने अपनी जिंदगी के खूबसुरत पल दाँव पर लगा दिए। वहीं परिवार उसकी उम्र बढ़ने पर उसे कबाड़ समझता है। ऐसा बिरला ही नसीबवाला वृद्ध होगा जो अपने अंतिम साँस तक किसी पर निर्भर न रहा हो। परिवारवालों की उपेक्षा से उसके व्यक्तित्व विघटन का दौर शुरु हो जाता है। वह अपने अनुभवों की पोटली सबके साथ बाँटना चाहता है पर नई पीढी यह अनुभव पोटली में बंद ही रखना चाहती है। समय की रफ्तार के साथ भागती नई पीढी पुराने विचार एवं लोगों को अपने जीवन का हिस्सा बनाने से कतराती है। मान–सम्मान की अपेक्षा करनेवाले वृद्ध अपने ही परिवार का अनादर देख टूट जाते है। इस कारण उनका जीवन कष्टप्रद बन जाता है। श्रीमती कीर्ती जी वृद्धजनों का समाज में स्थान दिखाते कहती है, 'भारतीय समाज में वृद्धों को सदैव आदर के साथ सर्वोच्च सम्मान प्राप्त रहा है। वह दया के पात्र नहीं वरन् पारिवारिक संरचना के अधिकार संपन्न मुखिया रहे हैं। वृद्ध हमारे लिए कभी भी समस्या नहीं रहे है उनके ज्ञान, अनुभव, कार्य, व्यवहार और कौशल से हमने प्रेरणा लेकर जीवन को धन्य माना है।'[1] 21 वीं सदी की महिला कहानीकारों ने अपनी कहानियों में परिवार में उपेक्षित वृद्धों की मानसिकता का चित्रण किया है। शशिप्रभा शास्त्री, मालती जोशी, राजी सेठ, सुधा अरोड़ा, सूर्यबाला, नासिरा शर्मा, अलका सरावगी, आदि कई महिला कहानीकारों ने अपनी कहानियों में प्रताड़ित वृद्धों का चित्रण किया है। इन कहानियों का अध्ययन करते हुए वृद्धों की कमजोरी, शिथिलता, अकेलापन, मृत्यु का भय, आपसी बिछुडन, संघर्ष, उपेक्षा, सत्ता परिवर्तन, हठवादिता, स्वार्थी प्रवृत्ति, समझदारी आदि कई वृद्ध जीवन के पहलू हमारे सामने आते है। कई वृद्ध स्वयं की स्वार्थी प्रवृत्ति एवं हठवादिता से अपना जीवन बरबाद करते भी दिखाई देते है।

मूल शब्द :

वृद्ध, शिथिलता, वृद्धावस्था, अकेलापन, परावलंबन, उपेक्षा, बिमारी, शारीरिक कमजोरी, संघर्ष, बेचारगी, छटपटाहट

भूमिका :

वृद्धावस्था जीवन की उस अवस्था को कहते हैं जिसमें मानव जीवन की उम्र औसत काल के समीप या उससे अधिक हो जाती है। यह स्वाभाविक एवं प्राकृतिक घटना है। 'वृद्ध' शब्द का अर्थ है –

ISSN NO – 2321-5488
Vol.: 6/ Issue: 1, July 2018

पका हुआ, परिपक्व, बढ़ा हुआ। हर व्यक्ति का जीवन काल तीन अवस्थाओं से बनता है–शैशवावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था। शैशवावस्था में हम दूसरों पर अर्थात् माता–पिता पर निर्भर रहते हैं। सबके चहेते, लाडलें बनकर जीते हैं। इस कारण 'शैशवावस्था' के दिन स्वर्णिम दिन होते हैं। 'युवावस्था' तो आसमान में पंख लगाकर उड़ने की ताकद हम में भर देती है। हम ऊर्जावान बनकर स्वयं के बलबूते पर जीते हैं। लेकिन सबसे कष्टप्रद अवस्था वृद्धावस्था होती है। यह उर्जाविहीन और समस्याजनक होती है। इस कारण भारतीय समाज में आश्रम व्यवस्था को बनाया गया है। 'आश्रम व्यवस्था को हिन्दुओं के सामाजिक संघटन का मूलभूत आधार कहा जा सकता है।'[2] इसी के नुसार मनुष्य के जीवन का विभाजन किया गया है। 'भारतीय सामाजिक व्यवस्था' में कथन है, 'आश्रमों के माध्यम से व्यक्ति के जीवन का समुचित विभाजन किया गया है जो सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, जैसे– बाल्यावस्था में बालक के पास अनुभव नहीं होते अतः उसे उचित मार्गदर्शन के लिए गुरु की आवश्यकता होती है; युवावस्था में शक्ति होती है जिनका उपयोग रचनात्मक कार्यों में किया जा सकता है; प्रौढावस्था में अनुभव होते है अतः पीढ़ी को लाभान्वित किया जा सकता है तथा वृद्धावस्था में शिथिलता आने से सांसारिक विरक्ति हो जाती है।'[3] बुढ़ापे में मनुष्य दुर्बल बन जाता है। इसलिए ही इसे हम जीवन के अंतिम सच का पायदान मानते हैं। स्वाति तिवारी जी ने बुढ़ापे के बारे में कहा है– 'वृद्धावस्था जीवन का एक सामान्य घटनाक्रम है। एवं प्राकृतिक सन्तुलन की अनिवार्यता भी। शरीर के विभिन्न अंगो की संचित कार्य क्षमताओं में धीरे–धीरे होनेवाली कमी से सम्बन्धित है।'[4]

वृद्धजीवन की त्रासदी :

वृद्धावस्था को जीवन संध्या कहा जाता है। वृद्धावस्था तक आते–आते मानव शरीर थक जाता है। शारीरिक क्रियाएँ बढ़ती उम्र से शिथिल बनती है। बाजारवाद के चलते तो 21 वीं सदी में अधेड़ उम्र में ही हम मिलावटी खानपान, फास्टफूड, कसरत के अभाव से बूढ़े बनते जा रहे है। अनेक बीमारियों का शरीर में प्रवेश हो चुका है। यह सत्य है कि आज सभी बीमारियों का इलाज होता है पर यह भी सत्य है कि इलाज का प्रभाव शरीर पर अपना बुरा असर छोड़कर जाता है। आज इन सभी कारणों से वृद्ध समय से पहले शारीरिक कमजोरी का सामना कर रहे हैं। अपने दैनिक कार्य के लिए अगर दूसरों पर निर्भर रहना पड़े तो इससे कष्टप्रद जीवन की कल्पना भी हम नहीं कर सकतें। वृद्धावस्था में शरीर की प्राथमिकताएँ भी बदल जाती है। ऐसे में अगर परिवार मन से साथ है तो आसानी से बुढ़ापा व्यतीत होता है। अगर नहीं है तो अपमानित होकर मृत्यु की राह देखते जीवन व्यतीत करना पड़ता है।

शशिप्रभा शास्त्री जी की कहानी 'अर्थ' में वृद्ध माँ अपने बेटे विजय के साथ अमेरिका में रहती है। पराया देश, पराए लोग, पराई भाषा से वह ऊब चुकी है। अपने ही बहू–बेटे के साथ रहते हुए भी वह परायापन, अकेलापन महसूस करती है। पहले से ही पति एवं छोटे बेटे की मौत का सदमा सहकर वह भीतर से टूट चूकी है। अब अजनबी देश एवं भाषा से रहा–सहा हौसला भी खोकर वह कमजोर एवं शिथिल बन गई है। बेटे के इसरार पर वह बाहर जाने के लिए तैयार होती है। लेकिन हड़बड़ाकर डरती है। माँ की शारीरिक शिथिलता दिखाते हुए शशिप्रभा जी लिखती है, 'बाल अब पहले की तरह न काले रह गए थे, न घुंघराले, चेहरा भी छोटी–छोटी झुर्रियाँ ओढने लगा था। सफेद बालों की लटों को उसने रंगवा लिया था। साड़ी को सहेज कर बाँधने लगी तो वह उँची–नीची हो गयी। विदेश में रहने पर भी वह साड़ी के अतिरिक्त कुछ और नहीं पहन सकी थी। बहू–बेटे की तरह स्मूर्तिवान न रहने से उसके हाथ कंपकंपा उठते थे। आत्मविश्वास धीरे–धीरे क्षीण होता जा रहा था। उस हीन भावना के कारण स्वतः उससे हर काम में कुछ–न–कुछ गलती हो जाती।'[5] 'एक और एक' कहानी में रमोला की ददिया सास बढ़ती उम्र से काफी कमजोर हो गई है। न वह ठीक से देख सकती है, न सुन पाती है। सरकते हुए रेंगती–सी चलती है। सफेद बालों में छिपी सफेद जुएँ उसे परेशान करती है। मगर बेचारी

ISSN NO – 2321-5488
Vol.: 6/ Issue: 1, July 2018

जुएँ साफ नहीं कर पाती। सब उसे जवान पोते केशव की मौत की जिम्मेदार ठहराते हैं। तब बेचारी डरकर आत्महत्या करने निकलती है। अत्यधिक भावुकता से रोना, खुदकुशी का रास्ता चुनना यह भी एक प्रकार की शारीरिक शिथिलता ही है। 'अर्थ' कहानी की बूढ़ी माँ अत्यधिक सुविधा से घिरी है फिर भी अकेलेपन से त्रस्त होकर पॅरेलिसिस की शिकार होती है। 'एक और एक' कहानी की वृद्धा दादी सबकी उपेक्षा से एवं परावलंबन से त्रस्त रहती है।

मालती जोशी जी की 'आश्वस्ति' कहानी की वृद्ध माँ बुढ़ापे में जल्दी से नहा नहीं पाती। इस वजह से परदेस जाने वाला बेटा उसे बिना मिले ही चला जाता है। बेटे की आवाज सुनकर वह जल्द नहाने की कोशिश तो करती है पर असफल रहती है। वृद्धावस्था में लाख कोशिश करने पर भी जल्दी से काम पूरा नहीं होता। पूरी जिंदगीभर के परिश्रम से, कष्टों से थके पूर्जे काम करना बंद कर देते हैं। बेचारी माँ की कमजोरी एवं शिथिलता चित्रित करते हुए मालती जी लिखती है, 'कितना भी चाहो इस उम्र में हाथ–पाँव जल्दी–जल्दी चलते भी तो नहीं। हड़बड़ाहट में साबुनदानी हाथ से छिटक दूर जा गिरी। तौलिया बाल्टी में जा पड़ा। किसी तरह कपड़े फँसाकर बाहर निकलीं तो याद आया कि चश्मा तो बाथरुम की खिड़की में ही छूट गया है। उसे लेने दुबारा जाना पड़ा। लौटीं तो बुरीं तरह हांफ रही थीं।'[6]

'नारी तू केवल ममता है' कहानी की ताईजी बढ़ती उम्र एवं ठीक तरह से देखभाल न होने से कमजोर हो गई है। सुहाग दर्प से दिप–दिप करता उनका मुखमंडल, पूरी बिरादरी पर शासन करनेवाला उनका दबंग सुदीर्घ व्यक्तित्व बुढ़ापे में खो गया है। आँखे कमजोर हो गई है। भावुकता बढ़ गई है। उनकी हालत देख सुमन कहती है, 'ये आपने अपना क्या हाल बना रखा है। मैं तो आपको एकदम पहचान ही न पायी थी। ये बात ठीक नहीं है ताईजी। आपको अपना इलाज करवाना चाहिए।'[7]

मालती जी की 'कबाड़' कहानी की बूढ़ी माँ अंधी हो गई है। इलाज न होने से वह सच में कबाड़ जैसी दिख रही है। वह जैसे भी हो चलना–फिरना चाहती है पर बहू ने उन्हें साडी की जगह लहँगा पहना दिया है। शर्म के कारण माँ दिन–रात कमरे से बाहर नहीं निकल पाती। 'मेहमान' कहानी की वृद्ध माँ तो पूरा घर संभालती है। नौकरी करनेवाले बहू–बेटा, डॉक्टरी पढ़नेवाला छोटा बेटा, ससुराल गई हेम बेटी सबको एकसूत्र में बांधे रखने का काम माँ करती है। रिटायर्ड पति की सेवा का जिम्मा भी उन्हीं का है। वृद्धावस्था में पूरे परिवार की जिम्मेदारी उठाकर वह भावुक बन गई है। मन से एवं शरीर से काफी थक चुकी है। अपनी कमजोरी बताते हुए माँ कहती है, 'कई बार कैसा–कैसा दर्द उठा करता है– कभी सीने में, कभी पेट में। कभी जोड़ जम जाते हैं। कभी सिर पर जैसे हथौड़े से पड़ने लगते हैं। कभी पाँव मन–मन भर के हो जाते हैं। तब चुपचाप पड़ी रहती हूँ। क्या करुँ।'[8]

'अनिकेत' कहानी के बूढ़े माता–पिता भी शारीरिक बीमारियों के चलते अपने घर से, गाँव से दूर बच्चों के पास रहते हैं। अगर वे स्वस्थ एवं दुरुस्त होते तो शायद वे कभी भी अपना गाँव छोडकर बेटे के पास न आते। 'समापन' कहानी में बिंदू के वृद्ध पिता अस्थमा के पेशंट है। हमेशा उनकी साँसे उखड़ती रहती है। बिंदू और उसकी माँ साँसे उखड़ने पर डरती है। 'अपने–अपने दायरे' कहानी की वृद्ध माँ बीमारी का पता चलते ही भावुक बन कर गाँव जाने की जिद करती है। वह कहती है, 'अगर मरना ही है तो घर ले चलो। यहाँ मरुँगी तो मुझे कौन जानेगा। ट्रक में डालकर चार जने फूँक आएँगे बस।'[9] 'विषपायी' कहानी की वृद्धा बिस्तर पर पड़ी है। बीमारी से वह काफी कमजोर हो गई है। वह हर काम के लिए दूसरों पर निर्भर है। बीमारी एवं बुढ़ापे ने उनमें हठवादिता भी आ गई है। वह केवल अपने मन की बात सुनती है। 'एक पल आस्था का' कहानी में क्षमा के सास–ससुर काफी थके हैं। वे बेटे अजय की मृत्यु के बाद स्वयं बहू का कन्यादान करते है। अपना बुढ़ापा सुधारने हेतु बहू की जवानी एवं जिंदगी बरबाद न हो इसलिए बहू का दुबारा घर बसाते हैं। खुद कमजोरी से थके हैं, न काम कर सकते है, न चल सकते है। 'बुआजी' कहानी की वृद्ध बुआ बढती उम्र से काफी कमजोर एवं शिथिल हो

ISSN NO – 2321-5488
Vol.: 6/ Issue: 1, July 2018

चुकी है। उम्रभर संघर्ष एवं परिश्रम से जूझने के बाद उनका पूरा शरीर दुर्बल बन गया है। अपनी भतीजी के घर उत्साह से आनेवाली बुआ बेटे मिलिंद की उदासीनता देख नाराज हो जाती है। छोटी–सी बात का बतंगड बनाकर नाराज होना, रोना, बुढापे में दिखायी देता है। 'एक सार्थक अहसास' कहानी के वृद्ध पिता भी कई शारीरिक कमजोरीयों से त्रस्त रहते है। नींद की कमी, कमजोर आँखे, बहरापन आदि के कारण वे चाहकर भी बहू–बेटे के बीच का झगडा समझ नहीं पाते। कभी–कभी उन्हें अपनी उम्र पर बहुत खीझ–सी होने लगती है। इसप्रकार मालती जोशी जी की कई कहानियाँ वृद्धावस्था की बीमारी, कमजोरी एवं सच्चाई उजागर करती है।

राजी सेठ जी की 'बाहरी लोग' कहानी की बूढी माँ कमजोरी एवं बीमारी से त्रस्त है। 'उसका आकाश' कहानी के असहाय वृद्ध देवीसिंह सालों–साल बिस्तर पर पड़े मृत्यु की राह देख रहे हैं। लकवा मारने से उनके शरीर का आधा हिस्सा स्पंदनहीन हो चुका है। 'बाँहें?.... उसने अपने बाएँ हाथ से अपनी दाई बाँह को छू लिया....पूरा छू लिया, छूता रहा, परंतु कोई स्पंदन नहीं हुआ। डॉक्टर कहते है, उसका दाया भाग मर गया है। क्या ऐसा भी होता है– व्यक्ति आधा मर आधा जीवित रहे? आधा अपना हो आधा पराया? आधा सुख–दुख स्पर्श संवेदन सह सके आधा जड़ हो जाए?.... जैसे कुछ खूँटी पर टँगा हो और नीचे चलता संसार देखता हो– कुछ मृत कुछ जीवित...'[10] वृद्ध देवीसिंह की शारीरिक शिथिलता से वृद्ध जीवन का सच सामने आता है। 'उतनी दूर' कहानी की बूढ़ी माँ भी कमजोर हो गई है। वह चाहकर भी न पढ़ सकती है, न तेज चल सकती है। जिम्मेदारी से उसका शरीर पहले से ही कमजोर हो चुका है। अब बढ़ती उम्र से शरीर के सारे पूर्जे दर्द करते रहते हैं। माँ की कमजोरी दिखाते हुए राजी जी लिखती है, 'घूटने संभालते कोहनी पर भार साधते इन्हें खींच निकालने का उपक्रम क्या किया कि कमर कमान–सी अधबीच अटकी रह गई। कितना भी रोए–पीटें... उस मुद्रा में वापिसी का लोच कहाँ से आएगा। हड्डियाँ पुरानी पड़ चुकीं। हंफनी हाथ लगी जो धौंकनी सी छाती की दीवारों को कूटती–पीटती बेदम कर गई।'[11] इस प्रकार राजी सेठ की कई कहानियों में वृद्ध जीवन की शारीरिक शिथिलताएँ दिखाई देती है।

सुधा अरोड़ा जी की 'काँसे का गिलास' कहानी में वृद्ध जीवन की अलग ही दास्तान दिखाई देती है। चिल्की की दादी उसे अपनी दादी का किस्सा सुनाती है। अपनी दादी की कमजोरी बताते हुए वह कहती है कि, 'पर दादी तो एक बार गिरीं तो फिर नहीं उठीं। कुल्हे की हड्डी चटक गई थी। डेढ़ महिने टांग पर वजन बंधा रहा। हड्डी की तरेड तो ठीक हो सुख गई। पर जब तक हड्डी जुड़ती टांगे बिस्तर पर पड़े–पड़े सूख गई। अब टांगों ने उनका वजन उठाने से इनकार कर दिया था।'[12] बुढ़ापे में अगर एक बार वृद्ध ने बिस्तर पकड़ लिया तो वह दुबारा ठीक नहीं हो सकता। एक के बाद एक शरीर के पूर्जे काम करना बंद कर देते हैं। 'उधडा हुआ स्वेटर' कहानी के दोनों वृद्ध शारीरिक शिथिलताओं को झेल रहे है। पैंसठ साल की शिवा न सुन सकती है, न ठीक से देख सकती है। वह उँगलियों की जकड़न से परेशान है। उसकी पीठ में भी दर्द है। शिवा की बीमारी एवं तकलीफ दिखाते हुए सुधा जी लिखती है, 'व्हेन ब्रेन कान्ट होल्ड एनी मोर स्ट्रेस, इट रिलीजेज स्पाज्म इ द बैक (जब दिमाग तनाव झेल नहीं पाता तो उस जकड़न को नीचे पीठ की तरफ सरका देता है।) तब आपकी गर्दन और आपके कन्धे अकड़ जाते हैं और दुखने लगते हैं। आप कन्धे का इलाज करते चले जाते हैं जब कि इलाज कन्धे की जकड़न का नहीं, दिमाग में जमकर बैठे तनाव का होना चाहिए।'....[13] शिवा कई छोटी–छोटी बीमारियों से परेशान रहती है। वृद्धावस्था में अत्यधिक तनाव कई बीमारीयों को न्यौता होता है।

'खिडकी' कहानी की वृद्ध माँ ट्यूमर की वजह से अपना संतुलन खो चुकी है। रात में बिस्तर गिला होने से अपनी बेटी से क्षमा माँगती है। 'अगली सुबह माँ उठी तो हाथ जोड़े गुनहगार सी बोलीं – मुनिया यह पता नहीं कैसे हो गया... मुझे पता ही नहीं चला, रात को कब बिस्तर गीला कर दिया

ISSN NO – 2321-5488
Vol.: 6/ Issue: 1, July 2018

मैंने।'[14] अचानक से हँसती–खेलती माँ बिस्तर पर पड़ जाती है। बीमारी में वृद्ध इतने दयनीय बन जाते है कि बेचारे मरना पसंद करते हैं।

'दहलीज पर संवाद' कहानी के बूढे माता–पिता बेटे को स्टेशन छोड आधी रात घर वापस आते है। सीढ़ीयों से ऊपर चढ़ते समय उनकी साँसे फूल जाती हैं। पैसों की तंगी से दोनों लगभग डेढ कि. मी. तक चलकर आए है। पर अब बेचारों की हालत खराब है। 'चप्पलों की चरमराहट और छड़ी की टक्–टक् का समवेत स्वर फिर शुरु होता है। इस बार उसमें हाफनी की भारी आवाज भी जुड़ जाती है। उँची चढ़ती हुई छड़ी की ठक्–ठक् दो–तीन क्षणों के लिए ठिठकती हैं। थक गई? हाँऽ..कहा था, रिक्षा ले लेते। अढ़ाई रुपये माँग रहा था। तो क्या हुआ? आराम से तो आ जाते।'[15] वृद्धावस्था की शारीरिक कमजोरी, नई पीढ़ी के साथ संघर्ष, आर्थिक परावलंबन इस कहानी में दिखाई देता है।

'दमनचक्र' कहानी में बूढ़े बीमार पिता बिस्तर पर पड़े रहते है। बेटी पर निर्भर रहने से उन्होंने अपनी आदतें बेटी के समयानुसार बदल डाली है। जैसे की, बेटी आराम से घर में ताला लगाकर जा सके इसलिए दिन भर सोते हैं, रात भर जागते हैं। उनकी अपनी कोई इच्छा, भावना नहीं है। वे पूरी तरह से परावलंबन का जीवन जीने के लिए अभिशप्त है। 'युद्धविराम' कहानी के बाबूजी अवकाश प्राप्त है। पत्नी की मृत्यु से अकेले पडे बाबूजी बहू–बेटे के पास रहते हुए भी असहाय है। न वे ठीक तरह से देख सकते हैं, न चल सकते हैं। हमेशा रौब के साथ रहनेवाला आदमी साथी की मृत्यु से असहाय बन जाता है। शेर की तरह रहने वाले बाबूजी अब सहमी बिल्ली बन चुके हैं। उनका शरीर डर से काँपने लगता है। बगैर लाठी के वे चल नहीं पाते। पत्नी के रहते उन्हें लाठी की कभी जरुरत महसूस नहीं हुई मगर अब मन से भयभीत बाबूजी बदल गए है।

सूर्यबाला जी के 'मानुषगंध' (2003) कहानीसंग्रह की कहानियाँ भी वृद्धावस्था का सच हमारे सामने लाती है। 'तिलिस्म' कहानी की माँ मायके आयी बेटी से जी भरकर बातें एवं प्यार करना चाहती है। उसके साथ खाना चाहती है। लेकिन बेटी की उपेक्षा से दुखी होती है। भावुकता में रोती है। 'जश्न' कहानी के बूढ़े दादा–दादी कमजोर आँखे, कान, थकावट, अरुचि, झुर्रियाँ, स्मृतिभ्रंश, अत्यधिक भावुकता जैसी बढती उम्र की सारी समस्याओं से पीडित है। 'समान सतहें' के चाचा का पोपला मुँह, झुकी गरदन, माथे पर ढेर–सी सलवटें वृद्धत्व को दर्शाती है। गरीबी और बुढ़ापा दोनों की वजह से उम्र से पहले चाचा बूढ़े दिख रहे हैं।

'हां लाल पलाश के फूल नहीं ला सकूँगा...' कहानी के चाचा, चाची, राखाल बाबू भी बुढ़ापे में थक चुके है। वृंदा के पिता बुढापे में बेटी वृंदा की जिम्मेदारी उठा रहे हैं। वृद्धावस्था में संघर्ष कर बेटी का घर बसाने का प्रयास करना इस कहानी में दिखाई देता है। 'निर्वासित' कहानी में माता–पिता अपने ही बेटे के घर में निर्वासित होकर रहते हैं। बढती उम्र से शरीर तो थक चुका है। माँ चाय बनाना चाहती है तो हाथ से बोतल फिसल जाती है। वह दयनीय बनकर बहू के सामने अपराधिनी–सी खडी हो जाती है। पति को कुछ मनपसंद बनाकर खिलाना भी अब उसके बस में नहीं है। एक कप चाय के लिए भी दोनों तरसतें रहते हैं। 'एक इंद्रधनुष जुबेदा के नाम' कहानी के उस्ताद अफजल मुराद भी बूढ़े हो गए है। बेचारे अपनी कोठरी में अकेले पडे रहते हैं। न ठीक से चल सकते है, न बोल सकते हैं। मशहूर गायक के रुप में परिचित उस्ताद अब दाने–दाने के मोहताज बन गए है। खाँसी से उनका दम फूलता है तथा साँसे उखड़ती रहती है। उस्ताद का अकेलापन एवं परावलंबन यहाँ दिखाई देता है।

'बाऊजी और बंदर' कहानी के वृद्ध बाबूजी गाँव में अकेले रहते हैं। अपने पोतों से अत्यधिक प्यार करते हैं। कभी–कभी अपने पोतों के साथ रहने के लालच में अपमान सहकर भी बेटे के पास आते हैं। बहू बहाना बनाकर उन्हें बार–बार गाँव भेजती रहती है। वे लाठी के सहारे चलते हैं। बच्चों को छोड़कर जाते समय रोते हैं। बंदरों को भगाने में नाकामाब होने पर बहू के सामने अपराधी बन जाते हैं। अपनी कमजोरी बताते हुए कहते है, 'अब तो पका–पकाया फल हूँ, अब गिरा कि तब पता नहीं इस

ISSN NO – 2321-5488
Vol.: 6/ Issue: 1, July 2018

जिंदगी में बच्चों के चेहरे देख भी पाऊंगा या नहीं। अकेले आना–जाना भी तो अब अपने बस का नहीं... हाथ पैर बेकार होते जा रहे हैं।'[16] वृद्ध युवाओं के संरक्षण में रहना चाहते है, वे मृत्यु के ड़र से अकेला रहते असुरक्षितता महसूस करते हैं। बुढ़ापे में आई कमजोरी, शिथिलता एवं भावुकता इस कहानी में दिखाई देती है। मृत्यु तथा अकेलेपन के डर से बाबूजी आत्मसम्मान खोने के बावजूद भी बेटे की देहरी पर ही पड़े रहते हैं।

'उत्तरार्ध' कहानी की वृद्धा नायिका भी नजर धुंधलाने से एवं थकान से परेशान है। वह कई बातें भूल भी जाती है। भावुक बनकर रोती है। 'आखिरवीं विदा' कहानी के वृद्ध माता–पिता भी शारीरिक कमजोरी से त्रस्त है। काम करते समय बूढ़ी माँ कई बार रपट जाती है। खरोंच लग जाना, खून निकलना, छिलक जाना ऐसा दिन में कई बार हो जाता है। बेचारे मजबूर है, चाहकर भी कुछ नहीं कर सकते क्योंकि विदेश गया बेटा जल्दी वापस नहीं आना चाहता। विदेश में बसी संतान के कारण अकेले रहते वृद्धों की यह कहानी है। 'पडाव' कहानी के बूढ़े निसंतान ताऊजी और ताई काफी कमजोर हो चुके हैं। ताईजी के पैरों में दर्द होता है तथा सूजन आती रहती है। आँख से कम दिखना, ठीक से सुनाई नहीं देना आदि कई शिथिलताओं से दोनों जूझ रहे हैं। 'समापन' कहानी की माँ सहारा लिए बिना न चल सकती है, न उठ–बैठ सकती है। आँख, कान, दात से कमजोर हो गई है। बुढ़ापे में अकेले रहने से वह डरती है। हमेशा सबके साथ बैठने की जिद करती है। सबके दुत्कारने पर बेटी के साथ वक्त गुजारने की कोशिश करती है। स्वजनों के साथ समय बीताने की कोशिश करते वृद्धों की बेचारगी यहाँ स्पष्ट होती है।

'दूज का टीका' कहानी की बूढ़ी बुआ अपने बेटे रतन के पास रहती है। बुढ़ापे में अपाहिज बनकर बिस्तर पर पड़ी रहती है। बेटा बहू नौकरानी के हाथों माँ की सेवा करवाते हैं। अपनों के स्पर्श का अपनापन महसूस करने के लिए बेचारी बुआ तरसती रहती है। नौकरानी पैसे लेकर काम तो करती है पर प्यार नहीं दे पाती। उसी प्यार के लिए तरसती बुआ अकेली संत्रास भरी जिंदगी काट रही है। अपनी कमजोरी बताते बुआ कहती है, 'बुआ अब चल–फिर नहीं सकतीं, एक जगह खाट पर बैठी रहती हैं। ऊपर की हँसी अंदर के दर्द से बिंधी, अब तो यही मेरा राजसिंहासन है न। तेरी बुआ इसी पर बैठ राज करती है, राज।'[17] यहाँ वृद्ध बुआ की छटपटाहट दिखती है।

निष्कर्ष :

मनुष्य के जन्म के साथ ही उसकी उम्र धीरे–धीरे बढ़ती वृद्धावस्था की ओर चलने लगती है। कुछ विद्वान तो गर्भ से ही मनुष्य के बुढ़ापे की शुरुवात मानते हैं। बचपन, जवानी के बाद धीरे–धीरे मनुष्य ऊर्जाविहीन बनकर कमजोर होता जाता है। इस ऊर्जाविहीन अवस्था से मनुष्य डर जाता है। वह इसे अभिशाप मानता है यद्यपि यह मनुष्य जीवन की अनिवार्य अवस्था है। पर सच तो यह है कि मनुष्य शरीर से बाद में थक जाता है पहले मन से थक जाता है। मानसिक तौर पर वह जब अपने आप को वृद्ध मानने लगता है तब वह वृद्ध बन जाता है। चाहे उसकी उम्र कम क्यों न हो? यह मनुष्य जीवन का अंतिम पड़ाव होता है। वैसे तो इस अंतिम पड़ाव के बाद ही मनुष्य जीना सीखता है। जिस प्रकार कच्चे, अधपके फलों में मिठास कम होती है। परिपक्व, पके फल अधिक मिठास भरे होते हैं। ठीक उसी प्रकार मनुष्य इस अवस्था में अधिक परिपक्वता की ओर आ जाता है। दुर्भाग्यवश हमारे देश में आज वृद्धावस्था को हेय समझा जाता है। परिणामतः नई पीढ़ी भटकती दिखाई दे रही है। महाभारत, रामायण जैसे ग्रंथों में हमने देखा है कि बुजुर्गों के अनुभव, परामर्श से ही नव पीढ़ी नव–निर्माण कर सकी है। आज उपभोगवादी दृष्टिकोण अपनाकर नई पीढ़ी वृद्धों की उपयोगिता नकार रही है। उनका अनुभव कोश खोलकर देखने में उन्हें कोई दिलचस्पी नहीं है। परिणामतः 21 वीं सदी के युवा नैराश्य जैसी बीमारीयों

ISSN NO – 2321-5488
Vol.: 6/ Issue: 1, July 2018

का सामना करते दिख रहे हैं। 21 वीं सदी की कहानियाँ वृद्ध जीवन की इसी यथार्थता को पाठकों के सम्मुख ला रही है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. श्रीमती किर्ती – अनुसुचित जाति के वृद्ध महिलाओं एवं पुरूषों का समाजशास्त्रीय अध्ययन, रोशनी प्रकाशन, 2017.
2. शर्मा विरेंद्र प्रकाश – भारतीय सामाजिक व्यवस्था, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, द्वि.सं. 2009, पृ. 96.
3. वही, पृ. 108.
4. तिवारी स्वाति – अकेले होते लोग, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं. 2006, पृ. 31.
5. शास्त्री शशिप्रभा – चर्चित कहानियॉ, सामाजिक प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2008, पृ. 93.
6. जोशी मालती – आपने आँगन की छाँव, मनु प्रकाशन, दिल्ली सं. 2008, पृ. 17.
7. वही, पृ. 75
8. वही, पूजा के फूल, मनु प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2011, पृ. 17.
9. वही, पृ. अंतिम संक्षेप, विकास पेपर बॉक्स, दिल्ली, प्र.सं. 2002, पृ. 100.
10. सेठ राजी – रूको इंतजार हुसैन, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, प्र.सं. 2012, पृ. 16.
11. सेठ राजी – दस प्रतिनिधि कहानियाँ, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं. 2013, पृ. 96.
12. अरोडा सुधा – काँसे का गिलास, आधार प्रकाशन, हरियाणा, प्र.सं. 2005, पृ. 112.
13. वही – बुत जब बोलते है, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं. 2015, 17.
14. वही – पृ. 76
15. वही – दस प्रतिनिधि कहानियाँ, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.सं. 2015, पृ. 61.
16. सूर्यबाला – एक इंद्रधनुष जुबेदा के नाम, विद्या विहार, नई दिल्ली, सं. 2008, पृ. 9.
17. वही – इक्कीस कहानियाँ, सुनिल साहित्य सदन, नई दिल्ली, सं 2011, पृ. 118.